* वन्देजिनवरम् *

लावनीरत्नमाला

जिसको

आपापरके कल्याणार्थ श्री रूपचन्द्र
जैन वैद्य इटावा निवासीने रचा
और ब्रह्मप्रेस इटावामें छपाकर
प्रकाशित किया ॥

प्रथमवार १००० } वीरसम्वत २४३७ { न्योछावर -) पैसा ४)

प्रार्थना ।

प्रियवर सज्जनो ! आपको विदित है कि प्राचीन समय के अनेक विद्याभूपण पण्डित कविवरोंके रचेहुए बहुतसे पद भजन जैनधर्मसम्बन्धी अत्यन्त गूढ़ाशयको लिये हुये वर्त्तमान समयमें विद्यमान है परन्तु इस समय विद्याकी अवनति होनेके कारण उन पदों का रहस्य हम से अल्पज्ञ जनोंकी समझमें नहीं आता तब हमारे भोले जैनी भाई अन्य मतावलम्बियोंके नये २ भजन लावनी सहज खुलासा मतलब के देखकर उनकी तरफ रुचि करते हैं इसलिये हमने सोचाकि जैसा २ समय पलटता जाता है वैसा २ ही नये २ भजन लावनीका प्रचार भी वदलता जाता है इस हालत को देखकर और हमारे अनेक मित्रों की प्रेरणा से यह लावनी रतनमाला नामकी पुस्तक बनाकर प्रकाशित करते हैं यदि मुझ से प्रमाद वश तथा अल्प बुद्धिके कारण इस पुस्तक में कुछ त्रुटि रहगई हो तो ज्ञानीजन तथा कविजनों से विनय पूर्वक प्रार्थना है कि मुझ पर क्षमा करके कृपा पूर्वक सूचित करें ॥

भवदीय जैनजाति सेवक

श्रीरूपचन्द जैनवैद्य इटावा

लावनी रतनमाला

मङ्गलाचरण

दोहा

सुमति नाथ जगके हितू सुमति प्रिया के राय।
नमूं सुमतिके हेतु को सुमति रही जग छाय॥

लावनी आदिनाथकी स्तुति

आदीश्वर जगदीस ईस को सीस नयाऊं वारम्बार। चौथे काळकी आदिमें प्रगटे किया जिन्होंने धर्म विस्तार ॥टेक॥ नाभि नृपति मरु दिव्या रानी नगर अयुध्या है शुभ थान। वदि अषाढ़ युग मरुदेवी उर सर्वारथसे कियो पयान सुरपति आज्ञा तें कुमेर ने पन्द्रह मास रत्न वर्षान। धनिपति नगरी रची अनोपम नव बारह योजन परमान ॥ सेवा करैं षट देवीमात की जिनका सुकृत जगतमें सार ॥१॥आदीस्वर॥ चैत्र कृष्ण नवमी दिन जन्मे तीनलोक सुख हुआ विसाल। इन्द्रन्हवन पांडुक पर कीना फेर पिताको सौंपा बाल । जाय टाल आई तरुणाई भोगन मगन भये तिहुंकाल। पर वि राग प्रगटा नहिं जिनके मघवा नृत्य रची न- त्काल। लषत अप्सरा मृत्यु विरागे लौकांतिक

आये तिहवार ॥ २ ॥ आदीस्वर ॥ जन्म मिती को तजि परिग्रह सब तरु अखवर तर ध्यान किया । धनुष पांच सत काय आयु चौरासो पूर्व लख जान भिया । ग्यारसिवदि फागुन को शुकल ध्यान घाति चितुक को जीत लिया । समो सरण को रचा सुरोंने कहने समरथ कौन जिया तिहूंकाल में खिरे द्रव्य ध्वनि झेलें गणपति जगहित कार ॥ ३ ॥ आदी ॥ जति श्रावक वृष करि बखान प्रभुगिर कैलाश पे जाय ठये । जिन के समय खट खंड अधिपती भरत नृपति चक्रेस भये । माघ कृष्ण चौदस को जिन वर अजर अमर पद पाय लये । तुमगुन नित प्रति गाते भवजन भव समुद्रके पार गये । रूप चन्द्र कर जोर नमें मोहि चहुं गति दुखसे वेग निकार ॥ ४ ॥ आदीस्वर ॥

लावनी अजितनाथ की ।

विजय से आये विजय सेना उर नृप जित शत्रु के है नंदन । प्रगटे अजित भजत सत भवि तिनको है हमरा वंदन ॥ टेक ॥ जेष्ठ अमावस की पिछली निश जननी षोड़स स्वप्न निहार । प्रात समय उठपतिसे पूछे अवधि धकी फल कहैं विचार । तीर्थंकर सुत होय तुमारे तीन लोक जन सुख करतार । गज्ज अरिहन्त

वृषभसे जगनगुरु सिंह चक्री यश होय अपार । समोसरण सुन श्री से शशि दुख ताप भविन हर जिम चन्दन ॥१॥ प्रगटे ॥ वे माल कीर्ति खगसे परतापी मीन युगम से सुख बहु जान ॥ सरलक्षण बर उदधि केवली घट विन बहु विद्याको खान । सुर विमान ते राज भोगवे सिंहासन पावे निरवान । अग्नि कर्म छय रतन श्रेष्ठ गुण फनपत उपजन हो बय ज्ञान । आनन गज प्रवेश जब देखा आयो उर सुर सुख वृंदन ॥२॥ प्रगटे ॥ सुन कर हर्ष भयो हिय ऐसा मानो जिन सुत पाय लये । गर्भ कल्याणकको हरि आये करि कल्याण निज थान ठये । स्याम माघ नवमी दिन जन्मे सक्र चिहन गज थाप गये । लक्षबहत्तर पूर्व आयु धनु साढ़े चार सत उच्च भये । इन्दु चैत्र पंचम तप धारो दूर करन को विध फंदन ॥३॥ प्रगटे॥ माघ दर्स शशि दुतिय शुक्लतें केवल ज्ञान प्रकाश किया॥ पौष चन्द्र इक गिर समेद तें मोक्षपुरीका राज लिया। पचास लख सागर किरोड़का अंतराल रहा सुनो जिया । चक्री सगर भये तिनके ग-मय गिर कैलास तिन सुत अगम किया । भाल नाथ यह अर्ज रूपचन्द्र बेगहरो गम दुःख दंदन ॥४॥ प्रगटे ॥

लावनी श्रावक की ५३ क्रियां

श्रावक कुल त्रेपन क्रियां पालना चहिये। नर भव चिन्तामणि दधि न डालना चहिये ॥१॥ टेक०॥ ऊमर ये कठूमर बरसे प्रीत बचाओ। पीपर पाकर को मनसे जल्द हटाओ। शक्कृत सम तुल्य महूक इसे मत खाओ। तुम करो मासका त्याग देखि हट जाओ। करता है वे सुधि अमल टालना चहिये ॥१॥ श्रावक ॥ सम द्रष्टी ग्यारह प्रतिमा धरि गुन गाना। ये पंच अ-नोवृतको तुम नहीं हटाना। और चतुर सिक्षा वृतको नर हिये लगाना। गुण वृतत्रय धारणकरो अरे सुन दाना। जलमें हैं जीव अनन्त गाल-ना चहिये ॥२॥ श्रावक ॥ तुम करो दरस और ज्ञानको उरमें धारी। सम्यक् चारित्र का ग्रहण करो अब जारी। जो चतुर दान है श्रेष्ठ करो नर नारी। शिवपुरको खर्ची यही सुगुरु उच्चारी। निशि भोजन का कहीं मन न चालना चहिये॥ ३ श्रावक ॥ बाहिर तप त्रय जुग धरो अरे शिव बटके। षट आभ्यंतर तप करो खोलपट घटके। आचरते इनको जीव मोक्षपुर सटके। इन छोड़ कुक्रिया करी चतुर गति भटके। अनुभव को रूप चन्द्र उरमें सालना चाहिये ॥श्रावक०॥

लावनी उपदेशी ।

गफलत की नींद में पड़ा पड़ा सोता है। निज शक्ति प्रगट कर क्यों खाता गोता है ॥ टेक॥ पाया है अवसर फेर नहीं पाने का। नर चिन्ता मणि फिर हाथ नहीं आनेका। दुरलभ मानुष भव मघवा तरसाने का। सम्यक्त है इसमें सार हिये लानेका। कहते हैं प्रमादी लब्धि विनाश होता है ॥ गफलत ॥ छह महिना उद्दिम राख तूं मेरे भाई यह साखि अमर चन्द्र समय सार में गाई पुरुषारथ तुम करो सुमन वचकाई। जिन जजन करो सामायक उर में लाई। यह वख्त अमोलिक वृथा तू क्यों खोता है॥२॥ गफलत ॥ तुम लेउ प्रतिज्ञा अभक्ष त्यागो मनमें। और साध नाथ स्वामीके रहो भजन में। स्वाध्याय तप करो अरे नरतन में। इस उद्दिम से निश्चय आवो दर्शन में। इस के बिन सारा ज्ञान चरण थोता है ॥३॥ गफलतकी ॥ धारे तीनोंकी जाय अरदमी घरने। शिव पुर का मारग यही कहा जिनवरने। यह सीख सुगुरु की धरो शीघ्र तुम डरने। वसुकर्म जीत पद पावो अजर अमर ने। भनि रूपचन्द्र क्यों पाप भार ढोता है ॥४॥ गफलत०॥

लावनी तर्जख्याल चंग में

निरखत आदिनाथकी मूरत शशि से जादा चमक रही है। जो जगदीश ईश जिनजी की कनक से देही दमक रही है ॥टेक॥ जन्मत ही श्रम रहित मूत्र मल रक्त मय वरण दिपक रहो है। बरसस्थान श्रेस्ट संहनन सुगंधतन में म हक रही है। वेंन तुमारे सब को प्यारे छबी तेरी उर छपक रही है॥ तुम भगवान अपर बल ऐसे कहत बुध मेरी अटक रही है ॥१॥ रबिकोट किरणसे अधिक प्रभूजी प्रभा तुमारो दहक रही है। गुण अनन्त त्रयलोक पती इस जहां पे महिमा झलक रही है। चचश्म अपनी से ना हटाऊं दरस की उर में ललक रही है। स्वामी एक छिन वियोग होते करा· री न एक पलक रही है अघ दुःख चिर मिथ्या तम टारन देखत तबियत फड़क रही है। शिता ब भवदधिसे प्रभू खींचो मुक्ति की दिलपर ख- टक रही है। करो भिन्न मम गमन जोन लख चोरासी में भटक रही है। नमत रूपचन्द्र शिव दीजे निज पद पे दृष्टि मेरी लपक रही है॥

लावनी हुक्का निषेध।

धरम भूल आचरण बिगाड़ा इस का हेतु नहिं रहा इलम । बिवेक जाता रहा हिये से

सबकी जूंठी पियें चिलम ॥ टेक ॥ प्रथम तमाखू महा अशुचि है मलेछ इस को बनाते हैं। छूने योग्य नहीं बरकुल के अपना तोय लगाते हैं। ठंडी चिलममें धूम्र जागतें जीव असंख्य बता ते हैं। पीते ही मरजांय सबी वो ये जिन श्रुत में गाते हैं। होती इसमें अपार हिंसा जरा दया नहिं आती शिलम ॥१॥ विवेक जाना० ॥ कौंमरिजाल्दों के साथ पीते जाय श्रावक येवया घनी है। दया दूर कर धरम गजाते उन्हीं में जा उनकी मत सनी है। वो चरसंगांजा पियें पिलावें उन्हीं ने वुधितेरी ये हनी है॥ स्वांस प्रगट कर बदन जलाता प्राण हरण को ये हर फनी है। लगाना दमका बहुत बुरा है पीते तन में पड़े खिलम ॥ २ विवेक ॥ थावर त्रस कर भरा स-हित जल कुवास का है निधान हुक्का। सुनोय पड़ते ही जीव मरते हैं पापका ये निधान हुक्का। रोग भिन्न होजांय कहें नर पीते हैं हम ये जान हुक्का। शुद्ध औपध करो ग्रहण तुम अशुचि दूर करिये जान हुक्का। सीख सुगुरुकी यही रूपच न्द त्यागो जल्द मत करो बिलम ॥ ३ विवेक ॥

लावनी कुमति सुमतिकी ध्यान देने योग्य

कुमति सुमति दो त्रियां चेतन के ताका कथन सुनों नरनार। जासु श्रवन तें निज स्व

रूप लखि भव थित घट छूटे संसार ॥ टेक ॥
मिथ्या नींदसे अचेत होकर सोवे सेज चतुर
गतियां। वक्त तीव्र वीतो चिन्मूरति काल ल-
ब्धि आई अथियां। सुरुचि तिष्ठ हिय सम्यक्
दर्शन छोड़ गये अघ निज लतियां। सचेत हो
कर कहै सुमति से कौन लगी मेरी छतियां।
(शेर) सुबुधि बोली कंथसेबैरिन कुमति मल
थान रे। लखि आप को या जिन भजोकर
जेर डारो खान रे। वर बुध बाला सीख धर
हिय कुबुध रिस होकर चली। तात सों पुत्री भ-
नें पी परिहरी में बेकली। सुता वात सुन अनंग
भेजा चलो बुलाया है दरबार ॥१॥ जासु श्रवण
ते० ॥ कहा दूतसे जाव न जावें लड़ने का आना
होगा। कही आय नृपसे नहीं आवे लेके
फौज जाना होगा। राग द्वेषको हुक्म दिया
सब सुभट यहां लाना होगा। सत्त बिसके सि
रदार सात कहें चल सम्मर ठाना होगा ॥शेर॥
करते गमन दल ले वहांसे सातको आगे किया।
पहुंच पुरचिद्को लखो गढ़ निकट जा डेरा
लिया। चिदानन्द लख शत्रुको तुरतहि बुला
या ज्ञान को। आके कहा लड़ने की त्यारी कर
हरो इसके मान को। कहै बोध से बड़े सूरमा
बुलवाओ आवें मम द्वार ॥२॥ जासु श्रवन०॥

दान शील तप भाव धार सतचारित्त बल धर सजि आया। दर्शन उपसम संतोषी सम भाव सुभावको बोलाया। विवेक चेतन सुध्यान जुत युग दलका पार नहीं पाया॥ सावधान हो कर प्रबोध ने लड़न का डंका बजवाया ॥शेर॥ जुद्ध दोनों मिल हुआ मोहन भजा हो गाफला। मारा विवेक नें सान को पुर देश भागा काफला। हार अवृत पुर कहे जा प्रत्यख्याना पकड़ ला। और सेना साथ ले वृत भंग करके जकड़ ला। पहुंचे लड़ने को सब दल ले सजे सूरमा ले हथियार ॥२॥ जासु॥ दोनों में मिल पड़ी लड़ाई मची मार होड़ा होड़ी। मिथ्यासास्वा-दन में जीवको करे मोह छोड़ा छोड़ी। मोह बली जिसे करे जेर राखें सत्तर कोड़ा कोढ़ो। तिसे जीत जा मिले आ अवृतपुर जोड़ा जोड़ी ॥शेर॥ मिल एक दस प्रतिमा से पहुंचे देश वृत पुर सारमें। आगे न जाने शत्रु देवें रोक बैठे द्वार में। ध्यान तेगा मार सत्तम नगर को चलना हुआ। तब मोहनें नब सूर ले लड़ने को फिर ढलना हुआ। रागसेन चले कषाय निद्रा वि-षय लाय प्रमत्त में डार॥४॥ जासु॥ अप्रमत्त किम राज होय कहे हंस इनसे कैसे छूटें। अष्टाष्टम गुन दोदंस तप बे विस परीसा सहि हम लूटें। स-त्तम पुर आजारा यन्द जब ध्यान तेज की लौ

फूटे। प्रथम सुकल चल अष्टम थिरता नव में मोह नही टूटे ॥शैर॥ सब ग्राम जीते जाय कहता मोह ये कैसे टले ॥

जासूर ले घेरूगा वस उपसंत तक मेरा चले। पहुंचे वहां छिप सूरमा। जिय निकस जात हरायके। सूक्षिम साम्पराय नगरी आप प्रगटे आयके। लोभ मार तहां भये निशंकित कोन लड़ेगा ग्यारम वार ॥ ५॥ जासु ॥

पकड़ बांह मिथ्यातमें डाला किया मोहने एसा वल। चिदानन्द निज सूरवुला लड़नेको जाड़ा अपना दल। तीन करणसे सातों क्षय करलीना अवृत पुर झट चल। देश वृत पुर लिया अनूपम अप्रत्यख्यान डाला दल मल ॥ शेर ॥ प्रत्यख्यानको नाशकर पट सप्त पहुंचे आयके। दो करण से तीन मारे लोना वसुपुर आयके। अनवृत करण छत्तोस मारे लोभको ततखिन हरा ॥ तवहि उपसम उलंघि के वारंममें पहुंचा जा खरा। यथाख्यात चारित्र प्रगट तहां दुतिय शुक्ल असिकर गहिसार॥६॥ सोलह सूरमा तहां विनाशे दोष अठारह गये कट फट। प्रगटे गुण छियालीस जहां पर लोका लोक लखा चटपट। निरोध जोग निरवृत्य क्रिया करि कृपान गहिलोना झट पट। अयोगपुर का राज लिया जहां प्रकृति पचासी गई हट छट ॥शैर॥ पहुंचे जाकर मोक्षपुर जहां अष्ट-

गुण होते भये अक्षय अनाकुल अनंत सुख में लीन जब होते भये । निज शरीरसे हीन कछुक पुरुषाकार प्रदेश है । आपै आप निमग्न है पर का नहीं लवलेश है । क्षमाधार शोधो ज्ञानी जन उधुरो रूपचन्द कहै पुकार ॥७॥

लावनी संभवनाथ की ॥

त्रिमल भावन षोड़स भाई । प्रकृति तीर्थंकर उपजाई ॥ टेक ॥ प्रथम ग्रीवकमें पहुंचे धप उदधि त्रय बीस जहां है वय । मान सेना जितार अरिक्षय ॥ तासु उर आये मोह रिपु जय ॥ शेर ॥ शुक्ल फागुन अष्टमी अहिमिन्द्र आयो गर्भमें । पूर्ण कातिक जन्म जिन आनन्द छायो सर्व में ॥ स्वर्गमें घंटक धुन छाई ॥१॥ प्रकृति ॥ जोतिषी ग्रेह नांद गाजे संख धुन असुरादिक छाजे । व्यन्तरनि के पटपट बाजे जन्म हरि जानो जिन राजे ॥शेर॥ साज ऐरापति पुरन्दर तुरत आयो जिन भवन । तब ही सचीको भेज कर शिशु गोद ले कीना गमन । प्रभूले पाण्डुक सिलजाई । प्रकृति ॥२॥ न्हवनकर जिनवर को तत्काल । आय श्रावस्ती तानदियो बाल । ताण्डवा । नृत्य रचोदर हाल । चिन्ह हय सम्भव नाम विशाल ॥ शेर ॥ निज थान हरि जा कान जिनकी जान कंचन के बरन ऊंचा धनुष है चारिसे त्रैलोक जनके मन हरन । आयु लख

साठ पूर्व पाई ॥३॥ पूर्ण मारग को तप धारासु कातिक तुरिय पक्ष कारा। घातिया चतुक घाति डारा ॥ लखा जिन लोका लोक सारा ॥ शैर ॥ विहार करि श्री जिन प्रभाकर भविक मल वि गसत करा चैत्र सुदि पष्टम दिवस प्रापति हुए अष्टम धरा ॥ रूपचन्द्र लखि ग्रन्थ गाई ॥ ४ ॥

चन्द्रगुप्तके १६ स्वप्नकी लावनी ।

चन्द्र गुप्तने षोड़स स्वप्न देखे पिछली रैन- मझार । भद्रवाहु स्वामी से पूछें कहै यतीपति फल विस्तार ॥टेक॥ जुदा जुदा सब कहै रि- षीपति श्रवण करे नृप छाड़ि कुभाव । इस ही दुखमा कालमें प्रगटे प्रगटे पंचम काल प्रभाव कल्प वृक्ष की साषा टूटी क्षत्री कुल नहि दीक्षा भाव। सूरज अस्त होत तुम देखा ताकरि श्रुत केवल का अभाव । सुर विमान जाते जो देखे अभाव षगचर रिष रिद्धि धार ॥चन्द्रगुप्त ॥ १ ॥ शशिमें छिद्र लखे जो नर पत होय भेद जिन धर्म विशाल । स्यामसिंह युग लड़ते देखे वरसे मेघ समय कोटाल । तीर्थ क्षेत्रमें धर्म न होवे मध्यमें सूखा देखा ताल ।तीरा में तुछ जल जो देखा दक्षिणमें वृष हो भूपाल । सिंहासन पर मरकट देखा होवे अकुली राज विचार ॥२ कनकपात्र में खीर स्वान भखि ऊंचे कुल नहिं लक्ष समाज । ऊंट चढ़ा नृप बालक देखा धरे

कुधर्म भूप सिरताज। उखा कमल कूट पर ऊधा वंश्यांके हो जिन नृपराज। उदधि छांड़ मर्याद उलंघे भूप नीत को छांड़ि लाज। रथ में वछड़ा जुड़े जो देखे वालापन में नप नचिसार ॥३॥ रतन राशि रजलिप्त जो देखो मुनि आपस में युद्ध करें। भूत नाचते लखे जो भूपति नीच द्रव्य जस जगत करे। एसा होवेगा तब आगे सोहम तुम से कही खरे। रूपचन्द लखि कथा कोरको कथन कहो मैंने मद टार ॥४॥

लावनी उपदेशी लिकड़िया।

नरभव चिन्तामणि पाया पूर्व पुन्य करके क्यों खोता है तू वृथा विषय में परके ॥ टेक ॥ प्रात काल नर दरस करो जिन घरके। फिर नमोंकार को जपो हिये में धरके। मान विपत और कषाय छोड़ो डरके ॥१॥ क्यों खोता ॥ स्वारथ के मात और तात कुटुम त्रिय हरके। जावेगा अकेला जीव देह यहां मरके। दे दई चितामें आग खाक भई जरके ॥क्यो खोता है॥ तुम तजो पांचहु पाप नहिं जैहो नरके। नर्को में वेदना सहो फिरो दर दर के। कर रूपचन्द आतम हित चतुगति हरके। क्यों खोता है ॥३॥

लावनी लोभकषायपर॥

लोभ सिपाही लगा जिगर में बेगैरा दुःख दाई है। बनाके मूरख चक्कर दीना मिथ्या मति

दौराई है ॥टेक॥ तृसणा अगिन से सदा जला-
ता पर धन चित्त चलाई है। बड़वा नल ज्यों
अगम नीर में छिनक शान्ति नहिं पाई है।
सात विसनका मूल यही है स्वर्ग कपाट लगाई
है ॥ बनाके मूरख ॥१॥ जीवोंका वो हतन करावे
जरा दया नहीं आई है॥ जो इस के वस होताउस
को अपजस जगमें छाई है। पंच पाप इसने करवा
के फेर नर्क पहुंचाई है। बनाके २॥ घोर दुःख तहां
सहें परस्पर और उलटा टंग वाई है। हाहाकारी
करते ही फिर कूंचा बारजलाई है। रूपचन्द लोभा-
दिक त्यागो केसो देर लगाई है। बनाके मूरख ॥३॥

लावनी उपदेशी।

कुमति की टोपी उतारो सिरसे सुमति की
पगड़ी जमाइयेगा। सुशील फतुंई को तन में
धारो ज्ञान अंगरखा बनाईयेगा ॥१॥ क्रोध बटन
तुम मतो लगावो क्षमा की घुंडी लगाईयेगा।
सन्तोष की तुम तनी लगाओ लोभके कांटे ह-
टाइयेगा ॥२॥ दरस डुपट्टा डाल हिये में अस्ट
कर्म को जलाइयेगा। कामका तेमद न पहरो
यारो धोती ब्रह्मचर्य पहराइयेगा ॥३॥ येमद प-
गरखी न पेंदो साहब मौजा मार्दव चढ़ाईयेगा।
येनाल हिंसाके मत वधावो दयाके पगका च-
लाईयेगा। कि झूंठा डंडा न बांधो कोई सत्य
छड़ीकर में लाईयेगा। सीख सुगुर की यही
रूपचन्द्र निज पोशाक को बनाईयेगा

लावनी

तुम कहो लाखमें नहीं मानना हटका ।
मेरा मन श्री जिन गुन गावन में अटका ॥टेक॥
भगवान भजन करने की लो लगी भारी फिर
बजे ताल मृदंग झांझ झनकारी । जिनवर गुण
गाते अब मिथ्या नमटारी । दिनोंजां मे भजन
करते ही विथा गई सारी । द्वादश जुग प्रभु का
गान करूं बेखटका ॥ तुम कहो लाख ॥१॥ गुण
करुणा निध जिस वक्त मैं गाऊं तेरा । देखन
दिल रहता फड़क फड़क कर मेरा । जिसे काम
क्रोध मद मोह लोभ ने घेरा । सब दूर किया
देदिया मुक्त का डेरा । तिन नाम का धागा
जिगर जान से लटका । तुम कहो ॥२॥ मैं रटूं
दयानिध जी को सांझ सकारे । तुम ही हो नाथ
हम जहां में तारन हारे । जो उर नहिं रटना
करें बिघन को डारे । वे बड़े अधर्मी सद्गुरु बच
न उचारे । ऐसे ही पुरुष को जल्द नर्क में प.
टका ॥ तुम कहो ॥३॥ जिन जी की महिमा टेर
के सुना रहे हैं । छांड़ो कषाय गुण गाओ जमा
रहे हैं ॥ करजोर रूपचन्द्र शीसको झुका रहे
हैं शिवपुर पावन की उर्जी लगा रखे हैं क्योंकि
यकीन है मुझे मोक्ष पुर सटका ॥ ४ ॥

लावनी विनती ।

नोट—भगवानके सामने खड़ं होकर पढ़नी चाहिए ॥

करन अरज कर जोर आइना सरण तुम्हारी

खड़े हुये। शिताब तारो प्रभू हम भव सागर में पड़े हुये ॥टेक॥ हम व्याकुल जिम मीन उदक बिन चैन जरा नहिं पाना है। लखि तुम दर्शन हर्ष हिरदे में नहीं समाना है। तुम सम देव न और दूसरा ढूंढ़ ढूंढ़ जग छाना है ॥ सुख कर दुःखहर आप तर पर को पार लगाना है। थारो इन्दु मुख चकोर मम द्रग कब परसे हम उड़े हुए शिताब तारो ॥१॥ छुड़ा देउ संसार तीब्र भयो काल गमन करते करते। उछले डूबे चतुरगति सिन्धु विषें परते परते। मनुष देव तिरयंच नर्क में अनन्त भव धरते धरते। यकीन हम को करो सहा तो लगें पार ढरते ढरते। तुम तन चितवन कब तारो हम जग समुद्र से हड़े हुए ॥२॥ श्रीपाल सागर से तारा हर बपु बिथा कुष्ट दलका ॥ पेठी सीता तेजलौं किया वहां सरबर जलका। बोरि सेन पर खड़ग चलायों लगा पुस्प होकर हलका। सेठ सुदरशन को विमान कियो छुटा हुक्म जो था गलका॥ हमको करी क्या ढोल फसे जिम पटमें कुलाबे जड़े हुये ॥३॥ और देव सब रागी द्वेषी द्वेप रहित जिन तुमी तो हो। मिथ्यातम के नाश के करने बाले तुमी तो हो। लगे शत्रु विध बसु अनादि के छुड़ाने हारे तुमीतो हो॥ भटकन लख चौरासी जोंन भव समुद्र तारन तुमी तो हो। अरज रूपचन्द्र निकन्द कर प्रभु अघ फंदे जा कड़े हुये ॥ शिताब ॥ ४ ॥